ज्ञान शांति मैत्री

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

हिंदी शिक्षण अधिगम केंद्र

द्वारा आयोजित त्रिदिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी

दिनांक : 06-08 अप्रैल, 2018

प्रतिवेदन/रिपोर्ट

संगोष्ठी

कार्यक्रम विवरण	कार्यक्रम का स्वरूप	कार्यक्रम स्थल	अवधि	आयोजक
21वीं सदी में विद्यालयी शिक्षा : बदलते आयाम, हस्तक्षेप और उभरते विकल्प	राष्ट्रीय संगोष्ठी	वर्धा, महाराष्ट्र	06-08 अप्रैल, 2018	हिंदी शिक्षण अधिगम केंद्र, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

'21वीं सदी में विद्यालयी शिक्षा : बदलते आयाम, हस्तक्षेप और उभरते विकल्प' विषय पर संगोष्ठी दिनांक (06-08 अप्रैल, 2016)

मानव-निर्माण की प्रक्रिया में शिक्षा को एक महत्वपूर्ण अभिकरण के रूप में जाना जाता है। इस प्रक्रिया में विद्यालयों की भूमिका ऐसे आगत की है जो आदर्श नागरिक व सामाजिकों को तैयार करते हैं। यही वह मूलभूत आधार है जिसपर विद्यालयी शिक्षा की सफलता-असफलता का मूल्याँकन होता है। इस संदर्भ में बात करते हुए यह नहीं भूलना चाहिए कि हमारी विद्यालयी

दीप प्रज्ज्वलन के साथ उद्घाटन करते हुए मा. कुलपति, प्रो. गिरीश्वर मिश्र, मुख्य अतिथि प्रो. आनंद प्रकाश, दिल्ली विश्वविद्यालय केंद्र के संयुक्त निदेशक, प्रो. अवधेश कुमार, एसोसिएट निदेशक, डॉ. गोपाल कृष्ण ठाकुर तथा अन्य।

शिक्षा की जड़ें पाश्चात्य पद्धति की औपचारिक शिक्षा में धँसी हुई हैं और यह शिक्षा का औपनिवेशीकरण की वृहत्तर परियोजना का महत्वपूर्ण हिस्सा था। यह तो स्वतन्त्रता-पूर्व की कथा है। हमारी व्यथा यह है कि हमने स्वातंत्रयोत्तर भारतीय समाज में भी इस औपनिवेशीकरण से निकलने और इसके बरक्स देशज शिक्षा व्यवस्था को विकसित करने का प्रयास नहीं किया। स्वातंत्रयोत्तर भारत में राज्य के एक अभिकरण के रूप में विद्यालयों की जो व्यवस्था हुई उसमें एक भाषा, एक पाठ्यक्रम और एक परीक्षा का आदर्श था। अर्थात इसका आदर्श सार्वभौमिक, मानकीकृत और एकरूप विद्यालयी शिक्षा था। जैसा कि कहा गया, इसे विद्यालयी शिक्षा-सुधार कार्यक्रम के नाम पर, राज्य का सहयोग प्राप्त था। आज इसका नकारात्मक पक्ष भी हमारे सामने है इसलिए हम तटस्थ होकर इसका मूल्यांकन कर सकते हैं। कहना न होगा कि टैगोर, गांधी, अरविन्द, गिजुभाई जैसे शिक्षाविदों के प्रयास से शिक्षा के देशज और भारतीय स्वरूप का निर्माण हुआ है। यह एक वैकल्पिक समझ थी। आज देश भर में अनगिनत विद्यालय इस वैकल्पिक स्वरूप पर काम कर रहे हैं। हमें फिर से शिक्षा के इन दोनों आदर्शों पर विचार करने की जरूरत है।

हमें मुख्यधारा की विद्यालयी शिक्षा को नकारना नहीं है, बल्कि तटस्थ ढंग से उस पर विचार करना है। हम यह कैसे भूल सकते हैं कि वर्तमान विद्यालयी शिक्षा ने अपनी पहुँच का तेजी से विस्तार किया है। इसने नगरीय क्षेत्रों से लेकर गाँवों और दुर्गम क्षेत्रों तक अपना विस्तार किया है। शिक्षा के अधिकार से तीव्र जनांककीय वृद्धि हुई है। लेकिन इसके साथ मूल्यगत स्तर पर इसकी सीमाएँ भी हमारे सामने हैं। विद्यालयी शिक्षा में रूपान्तरण के बदले पुनरुत्पादन और समावेशन के बदले बहिष्करण लक्षित हुआ है। संवैधानिक मूल्यों के बदले घोर वैयक्तिकता और बाजारवाद हावी होता गया है। वर्तमान विद्यालयी शिक्षा के लक्ष्य, आगत, प्रक्रिया और निर्गत में संगति का अभाव इसका सर्वप्रमुख कारण है। इसे ही तकनीकी शब्दावली में गुणवत्ता का अभाव कहते हैं। विद्यालयी शिक्षा में गुणवत्ता की स्थापना को ऐसी आदर्श परिस्थितियों के रूप में पहचाना जाता है जहां विद्यार्थी और शिक्षक दोनों का स्वाभाविक प्रस्फुटन हो सके। जहां अधिगम में अनुभव की प्रधानता, सर्जनात्मकता, विद्यार्थियों की वैयक्तिक आवश्यकताओं की पूर्ति, स्थानीय परिस्थितियों के साथ सामंजस्य और समावेशी व जीवन कौशल को प्रश्रय देने वाली परिस्थितियों का सृजन संभव हो सके। इस पूरी प्रक्रिया में नवाचार और सर्जनात्मकता की ज़रूरत है। विद्यालयी शिक्षा में ये वे मुद्दे हैं जिनकी आज के दौर में उपेक्षा संभव नहीं है। इस अनिवार्यता को ध्यान में रखते हुए हिंदी शिक्षण अधिगम केंद्र ने शिक्षा विभाग, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा के सहयोग से तीन दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया।

मा. कुलपति, प्रो. गिरीश्वर मिश्र द्वारा मुख्य अतिथि दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रो. आनंद प्रकाश जी का स्वागत एवं सम्मान साथ में केंद्र के संयुक्त निदेशक, प्रो. अवधेश कुमार, एसोसिएट निदेशक, डॉ. गोपाल कृष्ण ठाकुर।

इस संगोष्ठी का विषय था- **21वीं सदी में विद्यालयी शिक्षा: बदलते आयाम, हस्तक्षेप और उभरते विकल्प।** उद्घाटन सत्र के अतिरिक्त ग्यारह मुख्य सत्रों में इस विषय पर विस्तृत और अंतर्दृष्टि सम्पन्न चर्चा हुई। पहले मुख्य सत्र का विषय था- शिक्षा में वैकल्पिक हस्तक्षेप: सिद्धान्त और अभ्यास। इसमें विशेषज्ञ वक्ताओं के तौर पर डॉ अनुपम पचौरी और श्री शॉन कश्यप ने अपना वक्तव्य दिया। दूसरे सत्र का विषय **"शिक्षा में विकल्प: श्री अरविन्द और रवीन्द्र के विद्यालयों का आख्यान"** था। इस सत्र के अंतर्गत डॉ मोनिका गुप्ता और श्रीमती बोधिरूपा सिन्हा ने अपना वक्तव्य दिया। तीसरे सत्र का विषय था- **'विस्थापन और हाशियाकरण के बीच हस्तक्षेप'**। इस सत्र में प्रो उषा शर्मा, सुश्री कृति, श्री वृजेश सिंह ने विषय को समझाया।

दूसरे दिन के पहले सत्र का विषय था- **भारतीय समाज, संस्कृति और शिक्षा।** इस सत्र में प्रो. गिरीश्वर मिश्र (माननीय कुलपति, म.गां.अं.हि.वि.,वर्धा), प्रो. आनन्द प्रकाश (अधिष्ठाता, अंतरराष्ट्रीय संबंध, दिल्ली विश्वविद्यालय) और प्रो. आनन्द वर्धन शर्मा(माननीय प्रतिकुलपति, म.गां.अं.हि.वि.,वर्धा) उपस्थित थे। दूसरे सत्र का विषय **'भारत में वैकल्पिक शिक्षा के प्रयोग'** था। इसमें वक्ता के बतौर प्रो अरविंद झा, श्री टी. एन. श्रीकान्थ और डॉ. आशीष श्रीवास्तव मौजूद थे। अगले सत्र का विषय था- महानगरों में औपचारिक शिक्षा में हस्तक्षेप और विकल्प। इस सत्र में श्रीमती नमिता, डॉ. अजय चौबे और श्री मनीष बोरोनिया वक्ता के रूप में मौजूद थे। इस दिन के तीसरे सत्र का विषय था- वैश्वीकरण के दौर में शिक्षा। इसमें डॉ. गौरव सिंह, डॉ. नवनीत शर्मा और अंकित सिंह ने बतौर वक्ता अपना वक्तव्य दिया। इस दिन के अंतिम सत्र में प्रो. अनंदवर्धन शर्मा और प्रो. लालचन्द ने अपना वक्तव्य दिया। इसका शीर्षक था- हिंदी भाषा, साहित्य, मीडिया और शिक्षा। राष्ट्रीय संगोष्ठी का अंतिम दिन दो सत्रों में बंटा था। पहले सत्र का शीर्षक था **'संपोषणीय विकास के लिए शिक्षा।** इस सत्र में श्री प्रयाग जोशी, श्री संजय शर्मा, श्री शरद पटेल, श्री अमित और प्रदीप दास गुप्ता ने अपना वक्तव्य दिया। अंतिम सत्र एक विशिष्ट व्याख्यान का था। इसका शीर्षक था- **21वीं सदी में विद्यालयी शिक्षा।** इस सत्र के विशिष्ट वक्ता प्रो. बी रमेश बाबू थे।

संगोष्ठी में उपस्थित मा. कुलपति, प्रो. गिरीश्वर मिश्र सहित प्राध्यापक, कर्मचारी, प्रतिभागी एवं विद्यार्थी।

उद्घाटन सत्र में अध्यक्षीय वक्तव्य देते हुए माननीय कुलपति, प्रो. गिरीश्वर मिश्र ने कहा कि हमने शिक्षा को औपचारिक संस्थानों में बांधा। इस बंधन को मजबूत करने के लिए अनुशासन का सहारा लिया। व्यवहार और विचार के नियंत्रण के प्रयास किए। अंततः सुनिश्चित किया कि यदि एक कक्षा में 40 बच्चे पढ़ रहे हैं तो एक जैसी 40 प्रतिलिपियां हो जाएं। जबकि शिक्षा की

संगोष्ठी में अध्यक्षीय उद्बोधन करते हुए मा. कुलपति, प्रो. गिरीश्वर मिश्र, मंचासीन मा. प्रतिकुलपति, प्रो. आनंद वर्धन शर्मा, दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रो. आनंद प्रकाश, केंद्र के निदेशक, प्रो.कृष्ण कुमार सिंह, भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ के प्रो. अरबिंद कुमार झा।

भूमिका होनी चाहिए कि वह व्यक्ति को अपनी सीमाओं का अतिक्रमण करना सिखाए इससे वह आगे बढ़ता है। कुछ नया करता है। उसमें कुछ करने का बोध पैदा होता है। जैसे-छोटा बच्चा लिखना नहीं जानता था। उसने लिखना सीखा, पढ़ना सीखा फिर उसमें कविता और कहानी लिखने की क्षमता और योग्यता आयी। शिक्षा द्वारा उसने अपनी सीमाओं को पार किया। इसी क्रम में वह न केवल विषय की सीखने की सीमाओं का अतिक्रमण करता है बल्कि अपनी सीमाओं का अतिक्रमण भी करने लगता है। यह विस्तार वहां तक होता जाता है जहां ज्ञाता और ज्ञेय का संबंध खत्म हो जाता है। इस स्तर पर अनुभव और अनुभवकर्ता दोनों एक हो जाते हैं।

मानव स्वभाव की एक विशेषता यह है कि वह सुनम्य है। शिक्षा 'मानव' की रचना करती है। मनुष्य में अपार संभावनाएं हैं। शिक्षा इन संभावनाओं के विकास का साधन है। उल्लेखनीय है कि इस संभावना के विकास की सीमा नहीं है। दुविधा है कि शिक्षा इन संभावनाओं के विस्तार के बदले ज्ञान को वस्तु की तरह प्रदान करने की विधा बन गयी है जबकि शिक्षा एक 'क्रिया'

संगोष्ठी के तकनीकी सत्र के दौरान उपस्थित शोधार्थी, विद्यार्थी, शिक्षक तथा प्रतिभागी गण।

है। इस अर्थ में शिक्षा विकल्प देती है। विकल्प का अर्थ है कि शिक्षा व्यक्ति के बौद्धिक , शारीरिक और अन्य क्षमताओं का रास्ता प्रशस्त करती है। शिक्षा को क्रिया मानने का निहितार्थ है कि हम स्मृति को वस्तु न मानें बल्कि इसे क्रिया का हिस्सा मानें।

मुख्यधारा की शिक्षा, शिक्षा को वस्तु के अर्थ में प्रयुक्त करती है और डिग्री जैसे पैमानों से मापती है। यह जकड़बंदी हमारी संस्थाओं में है, पद्धति में है। ऐसी जकड़बंदी से मुक्ति के लिए हमें लीक से हटकर पढ़ने-पढ़ाने की विधियों और इससे जुड़े मॉडल पर विचार करने की जरूरत है। इस तरह की शिक्षा कल्पना शक्ति और रचना शक्ति को मजबूत करेगी।

राष्ट्रीय संगोष्ठी में दूसरे दिन, **भारतीय समाज, संस्कृति और शिक्षा** विषय पर अपने विशेष वक्तव्य में, माननीय कुलपति प्रो. गिरीश्वर मिश्र ने कहा कि भारतीय समाज भावात्मक रूप से एक है। कोई ऐसी धारा अवश्य है जो हमें चारों तरफ से जोड़ रही है। यह एक समृद्ध सांस्कृतिक विरासत वाला समाज है जिसकी परंपराओं की जड़ें गहरी हैं। इस समाज में वैचारिक स्तर पर अनके मूर्त या अमूर्त आदतें हैं जो जीवन शैली का हिस्सा बन गयी हैं।

संस्कृति का अध्ययन 'क्रास कल्चरल साइकोलॉजी' या 'एन्थ्रोपोलॉजी' में किया जा रहा है उससे ज्ञात होता है कि संस्कृति कुछ टूल देती है। इनके आधार पर व्यक्ति अपने परिवेश को देखता है, जीवन जीता है। उसके लिए संसाधन तलाशता है जो संसाधन कई प्रकार के हो सकते हैं। इनके लिए श्रम की आवश्यकता होती है। संस्कृति अनुभवों का एकत्रीकरण है जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को मिलता है। अतः संस्कृति हमेशा परिवर्तित होती रहती है। लगातार कहा जा रहा हैं शिक्षा रोजगारपरक होनी चाहिए। हम किस तरह के मनुष्य का निर्माण करना चाहते हैं यह प्रश्न अनुत्तरित है। उसी प्रकार पूरा शिक्षा का आयोजन प्रतिद्वंद्विता का है। एक बाजार नियंत्रित जीवन की मुश्किलें हैं। शिक्षा भी इन मुश्किलों से अछूती नहीं है। प्रतिद्वंदिता शिक्षा का आधार बन चुकी है। ऐसी स्थितियों में कैसे साधारण जीवन जीएं? इस पर विचार करना बहुत जरूरी है।

माननीय प्रतिकुलपति, प्रो. आनन्द वर्धन शर्मा ने कहा कि शिक्षा के सवालों को केवल राज्य य सरकार तय नहीं कर सकते। इसकी ज़िम्मेदारी समुदाय को भी उठानी होगी। शिक्षा को बच्चों में नैसर्गिक प्रतिभा पहचानने का उपकरण बनाना होगा। नैसर्गिक प्रतिभा को विकसित करने का मौका मिलने पर प्रत्येक विद्यार्थी अपने जीवन के सर्वोच्च शिखर पर जा सकता है। नैसर्गिक प्रतिभा के आधार पर शिक्षा देनी है तो सभी स्कूलों को बंद कर देना चाहिए। दुनिया का इतिहास गवाह है कि विद्यालयी व्यवस्था फेल हो रही है। शिक्षा की मुख्य चुनौती है कि विद्यार्थी को परिवेश से कैसे जोड़ें। वह अच्छा नागरिक कैसे बने और उसकी विविधता का पोषण कैसे हो।

संगोष्ठी के समापन सत्र में संबोधन करते मा. प्रति कुलपति, प्रो. आनंद वर्धन शर्मा, अध्यक्षता करते हुए मा. कुलपति, प्रो. गिरीश्वर मिश्र, हैदरावाद विश्वविद्यालय के प्रो. आर.एस.सर्राजू, दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रो. आनंद प्रकाश तथा केंद्र निदेशक, प्रो. कृष्ण कुमार सिंह व अन्य।

उद्घाटन के बाद पहले मुख्य सत्र में अनुपम पचौरी ने शिक्षा में पब्लिक-प्राइवेट-पार्टनरशिप के मॉडल पर बात की। उन्होंने कहा कि यह एक समझ है कि शिक्षा में जितनी समस्याएं हैं उन्हें ‘पब्लिक, प्राइवेट पार्टनर’ के माध्यम से हल किया जा सकता है। मेरा राजस्थान में शिक्षा पर अध्ययन है, मैं कह सकती हूँ, कि गैर-सरकारी संस्थानों ने राजस्थान सरकार के साथ काफी काम किया है। इस संदर्भ में जो तर्क दिया जाता है वह यह है कि सरकारों को करना बहुत कुछ है, लेकिन उनके पास पूँजी की कमी है। यदि प्राइवेट पार्टनर आएंगे तो पूंजी की कमी के गैप को पूरा करेंगे। लेकिन मैं राजस्थान के संदर्भ में कह सकती हूँ कि यह कारगर नहीं हुआ। कोई भी एक प्राइवेट सेक्टर कंपनी उतना बड़ा लक्ष्य नहीं रखती थी, जो राजस्थान सरकार चाहती थी। पार्टनरशिप क्या है? इसमें एक-दूसरे के प्रति जवाबदेही होती है। जब दो पार्टनर आते हैं तब समान उद्देश्य होता है। लेकिन यहाँ सब कुछ लचीला रखा जाता है ताकि प्राइवेट पार्टनर उसे अपने हिसाब से तोड़-मरोड़ सकें। इसी सत्र में दूसरे वक्ता के रूप में अपनी बात रखते हुए शॉन कश्यप ने कहा कि ‘इतिहास’ और ‘हिस्ट्री’ एक नहीं हैं। दोनों अलग ज्ञान परम्पराएँ हैं। इनके अनुवाद में कोई घालमेल नहीं होनी चाहिए। जब भी ज्ञान की बात होती है नालंदा, तक्षशिला के गौरवान्वित इतिहास से शुरू होती है। यह हिन्दूवाद नहीं है, इतिहास है। लेकिन ऐसा क्या होता है कि 18वीं 19वीं शताब्दी आते-आते इसमें एक बड़ा परिवर्तन होता है। यह है उपनिवेशवाद का हस्तक्षेप। आप जिस उपनिवेशवाद की बात 21 वीं सदी में कर रहे हैं वह हस्तक्षेप बहुत ही बड़े रूप में 18वीं 19वीं शताब्दी में हो गया था। उपनिवेशवाद के पहले शिक्षा एक सामाजिक सांस्कृतिक प्रक्रिया थी, जिसमें राज्य का कोई प्रत्यक्ष हस्तक्षेप नहीं हुआ करता था। उपनिवेशवाद के पहले जो भी शिक्षण संस्थाएँ इस देश में चल रही थीं, वे चाहे गुरुकुल हों, इस्लामी आगमन के बाद मदरसे हों, उन पर राजकीय हस्तक्षेप कभी भी प्रत्यक्ष रूप से नहीं था। उपनिवेशवाद के बाद जो बहुत बड़ा परिवर्तन आया वह यह कि शिक्षा को राज्य के नियन्त्रण में लाया गया। शिक्षा का पैमाना क्या होगा, कैरीकुलम कैसा होगा, डिजाइनिंग कैसी होगी राज्य को इसके लिए अधिकृत किया गया। राज्य के बाहर जाकर अब कोई नई शैक्षणिक परिकल्पना नहीं है। उनका मानना था कि गांधी पाश्चात्यवाद और पश्चिम आधुनिकता के पहले प्रबल आलोचक हैं।

दूसरे सत्र में अपनी बात रखते हुए डॉ. मोनिका गुप्ता ने महर्षि अरविन्द की शिक्षा और उसके महत्व को रेखांकित किया। उन्होंने कहा कि श्री अरविन्द की शिक्षा पूर्ण शिक्षा है। यह पूर्णता की ओर ले जाती है। एक शिक्षक की भूमिका है कि वह

संगोष्ठी में स्वागत वक्तव्य देते हुए संयुक्त निदेशक, प्रो. अवधेश कुमार तथा मंचासीन पदाधिकारी एवं अतिथिगण।

सहायक बनकर वह विद्यार्थी की केवल मदद करे। किसी पौधे को बाहर से खीचकर बढ़ाया नहीं जा सकता। श्री अरविन्द के हिसाब से शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति के भौतिक शरीर, मन व आत्मा के साथ ही आध्यात्मिकता को विकसित करना है। फिजिकल एजुकेशन के संदर्भ में श्री अरविन्द का मानना है कि जो आठ घंटे बैठाकर रखे वह स्कूल नहीं हो सकता। इससे हमारे शरीर को

नुकसान होता है। ऐसे में 10 से 19 साल में ही सर्वाइकल की समस्या हो जाती है। व्यक्ति से संवेगात्मक रूप से जुड़ना, उसके चरित्र का निर्माण करना तथा संवाद स्थापित करते हुए उसकी सोच को विकसित करना शिक्षा का मुख्य लक्ष्य होना चाहिए। इसी सत्र में बोलते हुए डॉ. बोधिरूपा सिन्हा ने रवीन्द्र के शिक्षा दर्शन और उनके विद्यालयों पर अपने वक्तव्य में कहा कि सन 1901 में शांतिनिकेतन आश्रम विद्यालय की स्थापना की गयी। सन् 1901 में आनंद विद्यालय की स्थापना हुई। इसका मुख्य लक्ष्य था कि बच्चे आनंद एवं खुशियों के साथ शिक्षा ले सकें। यहां आनंद का अर्थ भीतर के आनंद से था। विद्यालय में विकास के तीन आयाम हैं- शरीर के लिए, मन के लिए, आत्मा के लिए। आपने बताया की यहाँ कभी-कभी तो पेड़ो के नीचे क्लास होती है। सुबह प्रार्थना होती है । सभी मिलकर करते हैं, उसके बाद ही क्लास में जाते हैं। यहाँ हफ्ते में एक बार साहित्य सभा भी होती है, जिसमें सभी बच्चे अपना रचनापाठ करते है, समालोचना भी करते हैं। विद्यालय में बहुत सारे पर्व य उत्सव मनाए जाते हैं उन्होंने कहा कि जिस गुरु के भीतर का बचपना समाप्त हो गया हो वह बच्चों का भाग्य नहीं बदल सकता।

पहले दिन के अंतिम सत्र का शीर्षक था- विस्थापन और हाशियाकरण के बीच हस्तक्षेप। इसमें बाह्य विशेषज्ञ के रूप में तीन वक्ताओं ने अपनी बात रखी। इस सत्र में उषा शर्मा ने 'मथुरा माला प्रोजेक्ट' और उसके अनुभवों के बारे में बताया। उन्होंने बताया कि प्रारंभ में बच्चा पढ़ना, लिखना कैसे सीखता है, उसके बारे में जानने के लिये यह प्रोजेक्ट उत्तर प्रदेश के मथुरा जिले के ब्लाक- नवझील, गोवर्धन, चौमुह का चयन किया गया था। इसमें पहली और दूसरी कक्षा के बच्चे थे। इन स्कूलों में 1200 अध्यापक और 40 हजार बच्चे थे। उन्होंने इस प्रोजेक्ट के माध्यम से बताया कि विद्यालयी शिक्षा में नवाचार और रचनात्मकता पर ज़ोर दिया जाना चाहिए। सुश्री कृति ने आधारशिला विद्यालय में अपने शिक्षण के अनुभव को साझा किया और उसके विश्लेषण द्वारा शिक्षण प्रक्रिया को रचनात्मक और लोकतान्त्रिक बनाने की बात कही।

संगोष्ठी में तकनीकी सत्र के दौरान अध्यक्षता करते हुए निदेशक, प्रो. कृष्ण कुमार सिंह व अन्य विद्वानगण।

'महानगरों में औपचारिक शिक्षा में हस्तक्षेप और विकल्प' विषय पर बोलते हुए श्रीमती नमिता ने कहा कि जब आप घर बनाते हैं तो देखते हैं कि कहीं पर टेढ़ा हुआ तो उसे ठीक कर सकते हैं लेकिन मनुष्य का जीवन इतना आसान नहीं होता। प्रकृति ने मनुष्य को बच्चा बनाया था। उसने नहीं सोचा था कि इसके साथ आगे क्या होगा? वह टीचर बनेगा? डॉक्टर बनेगा या कुछ और होगा। उनकी मान्यता थी कि माता-पिता का दायित्व प्रकृति के हिसाब से बच्चे को शिक्षा देना होना चाहिए। आप छोटे बच्चे को देखिए। वह झाड़ू लगाना जानता है। कपड़े खुद धोना चाहता है। धीरे-धीरे हम इन कामों को 'छोटा काम' बता देते हैं। और उनकी दुनिया में पढ़ाई-लिखाई जैसी चीजों को महत्व देने लगते हैं। उन्होंने कहा कि इसी कारण मेरे स्कूल का मानना है कि हम छोटे बच्चे, जिससे मेरा आशय 7 वर्ष तक के उम्र के बच्चे से है, उनकी नींव को मजबूत करना होगा। इसके

लिए हमें स्कूल की यांत्रिकता से बचना होगा। गांव की दुनिया की कल्पना कीजिए। वहां शहरों की अपेक्षा अधिक आजादी है। बच्चे को काम करने के लिए प्रकृति से अधिक से अधिक संसाधन उपलब्ध हैं। शहरों में ऐसा नहीं है। मां-बाप दोनों को काम पर जाना होता है। बहुत छोटी ही उम्र में बच्चे को 'क्रैच' और 'प्ले स्कूलों' में डाल दिया जाता है। उन्होंने कहा कि बच्चा कोई रोबोट नहीं है बल्कि वह सोचने-विचारने वाला प्राणी है। उसके पास ज्ञानेन्द्रियां हैं, मस्तिष्क है। वह अनुभव करता है। विचार करता है। लेकिन हम लोग सारा जोर उसे केवल अंग्रेजी और गणित जैसे विषय सीखाने में लगा देते हैं। हमारा विद्यालय थोड़ा अलग करता है। उदाहरण के लिए पहले उसे कहानी सिखाते हैं। फिर ब्लैक बोर्ड पर लिखते हैं वह धीरे-धीरे भाषा सीखता है और फिर वह आँख बंद कर बोलता भी है। नमिता जी ने कहा कि हमारा दृढ़ विश्वास है कि बच्चे को इंसान बनाना शिक्षा का उद्देश्य है। जीवन ही हमारे लिए सीख है। किसी पाठ्यक्रम को पूरा करने के बजाय हम दैनिक जीवन के क्रियाकलापों के माध्यम से सिखाते हैं। डॉ. अजय चौबे ने दिल्ली के सरकारी स्कूलों के अपने अनुभवों का विश्लेषण करते हुए महत्वपूर्ण बातों की तरफ इशारा किया।

'वैश्वीकरण के दौर में शिक्षा विषय' पर बोलते हुए डॉ नवीन शर्मा ने विडम्बना की तरफ़ संकेत करते हुए कहा कि देखिए रूपक कैसे गढ़े जाते हैं! क्या स्कूल और समाज को 21वीं सदी के साथ जोड़कर देखते हैं तों 21वीं सदी में आ जाते हैं? उन्होंने उदाहरण देकर बताया कि - 'मंधा कोले; जो कि महाराष्ट्र के मौसम विभाग में एक आधिकारी हैं, वह थाने में जाकर यह रिपोर्ट लिखवाती हैं कि मेंरी नौकरानी ने मुझसे झूठ बोला कि मैं मांगलिक ब्राह्मण हूँ, लेकिन वह दलित है, और इस तरह उसने मेंरे साथ धोखा-धड़ी की है। स्कूल व समाज दोनों 20वीं सदी के हैं। हम लोग भ्रम में हैंकि हम 21वीं सदी में जी रहे हैं। इसी सत्र में श्री अंकित सिंह ने आनन्द निकेतन विद्यालय का अपना अनुभव साझा किया। आदिवासी बच्चों के बीच काम करने वाले

संगोष्ठी के समापन सत्र में आख्या प्रस्तुत करते हुए डॉ. ऋषभ कुमार मिश्र, मंचासीन मा. कुलपति, प्रतिकुलपति, केंद्र निदेशक एवं अतिथिगण।

प्रयाग जोशी ने 'इमली महुआ विद्यालय' का अनुभव साझा किया। उन्होंने बताया कि इमली महुआ विद्यालय बलेंगापारा के आसपास के आदिवासी बच्चों के लिए स्कूल है। बलेंगापारा छत्तीसगढ़ राज्य के बस्तर जिले का एक बहुत पिछड़ा हुआ गाँव है। वहाँ मैंने जब स्कूल शुरू किया तब बिजली भी नहीं थी। फोन कनेक्टीवीटी और टीवी भी नहीं था । ठीक-ठाक हॉस्पिटल हमारे गाँव से 90 किलोमीटर दूर था। यहाँ भोरिया गौंड जनजाति-समाज के लोग रहते हैं। यह 2007 में स्थापित हुआ। उसे चेन्नई स्थित आकांक्षा चैरिटेबल ट्रस्ट संचालित करता है। इमली महुआ नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ ओपेन स्कूलिंग का एक पंजीकृत केंद्र है। लेकिन स्कूल को कोई सरकारी अनुदान नहीं मिलता। स्कूल में आने वाले तीन चौथाई बच्चे मुड़िया-गोंड जनजाति के हैं। बाकी बच्चे अनुसूचित जातियों या अन्य पिछड़ी जातियों से आते हैं। शुरुआत दो छात्रों से हुई। उसके बाद हर साल बच्चों की संख्या

बढ़ती गयी। आज बच्चों की संख्या साठ है। हम मानते हैं कि इससे ज्यादा होने पर हमारे स्कूल की गुणवत्ता घट जाएगी। नये बच्चे का एडमीशन तभी होता है जब कोई बच्चा स्कूल छोड़कर जाता है। उन्होंने बताया कि हमारा यह स्कूल शुरू में गाँधी की नई तालीम शिक्षा और जिद्दू कृष्णमूर्ति शिक्षा पद्धतियों से प्रभावित था।लेकिन आगे बढ़ने के साथ स्वयं हमने बहुत कुछ सीखा और बदला। श्री जोशी ने जब स्कूल की शुरूआत की थी, तो वहां के बच्चे हिंदी वर्णमाला भी बड़ी मुश्किल से समझ पाते थे, लेकिन आज ये बच्चे न सिर्फ धारा प्रवाह हिंदी बोलते, पढ़ते और लिखते हैं, बल्कि अंग्रेजी भाषा भी वे धारा प्रवाह बोल लेते हैं। श्री प्रयाग जोशी ने बताया कि उनके स्कूल में होमी जहांगीर भाभा विज्ञान केंद्र मुम्बई, एकलव्य संस्थान (होशंगाबाद), राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (एनसीईआरटी) की पुस्तकें बच्चों को पढ़ाई जा रही हैं। आठवीं की पढ़ाई पूरी करने के बाद दो बालिकाएं राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय (एनआईओएस) के पाठ्यक्रम में दसवीं की परीक्षा की तैयारी कर रही हैं। उन्होंने बताया कि हमारा विद्यालय बच्चों के लिए अपनी ओर से छात्रवृत्ति भी देता है। उन्होंने इसके लिए डाक घर में बच्चों के नाम से लोक भविष्य निधि (पीपीएफ) खाता भी खुलवा दिया है। खातों का संचालन बच्चों की माताओं के नाम से किया जा रहा है। पहली कक्षा के बच्चों को एक हजार रूपए, दूसरी के बच्चों को दो हजार रूपए, तीसरी के बच्चों को तीन हजार रूपए और इसी क्रम में आठवीं के बच्चों को आठ हजार रूपए की वार्षिक छात्रवृत्ति उनके द्वारा दी जाती है। श्री जोशी ने बताया कि स्कूल का समय सवेरे 10 बजे से शाम पांच बजे तक निर्धारित है, लेकिन उन्होंने स्थानीय परिस्थितियों को देखते हुए बच्चों को यह सहुलियत दी है कि वे इस अवधि में अपनी सुविधा के अनुसार आकर पढ़ाई कर सकते हैं।

ज्ञान शांति मैत्री